

भक्तामर-स्तोत्र

कवि गिरिधर शर्मा-कृत

हिंदी-पद्यानुवाद

गुणवन्तराय जैन अरायज़ नवीस कलक्टरी सहारनपुर की ओर से भेंट।

मल्हीपुर ब्रांच प्रेस, सहारनपुर।

भक्तामर-स्तोत्र

कवि गिरिधर शर्मा-कृत

हिंदी-पद्यानुवाद

हैं भक्त - देव - नत - मौलि - मणिप्रभाके,
उद्योत – कारक, विनाशक पापके हैं;
आधार जो भव–पयोधि पड़े जनोंके,
अच्छी तरा नम उन्हीं प्रभुके पदों को
श्री आदिनाथ विभुकी स्तुति मैं करूंगा,
की देव लोकपतिने स्तुति है जिन्हों की;
अत्यन्त सुन्दर जगत्रय — चित्तहारी,
सुस्तोत्र से, सकल शास्त्र रहस्य पाके।२
हूं बुद्धिहीन, फिर भी बुध–पूज्यपाद !
तय्यार हूं स्तवन को निर्लज्ज होके;
है और कौन जगमें तज बालको, जो,
लेना चहे सलिल-संस्थित चन्द्र-बिम्ब ? ३

होवे बृहस्पति – समान सुबुद्धि तो भी,
है कौन जो गिन सके तव सद्गुणोंको ?
कल्पान्तवायु–वश सिन्धु अलंघ्य जो है,
है कौन जो तिर सके उसको भुजासे ?४
हूं शक्तिहीन फिर भी करने लगा हूं,
तेरी प्रभो, स्तुति, हुआ वश-भक्तिके मैं
क्या मोहके वश हुआ शिशुको बचाने,
है सामना न करता मृग सिंहका भी?५
हूं अल्पबुद्धि, बुध—मानव की हंसी का
हूं पात्र, भक्ति—तव है मुझको बुलाती;
जो बोलता मधुर कोकिल है मधू में,
है हेतु आम्र कलिका बस एक उसका।६
तेरी किये स्तुति, विभो, बहु जन्मके भी
होते विनाश सब पाप मनुष्यके हैं;
भौंरे समान अति श्यामल ज्यों अन्धेरा
होता विनाश रविके करसे निशा का।७

यों मान, की स्तुति शुरू मुझ अल्पधीने,
तेरे प्रभाव-वश, नाथ, वही हरेगी
सल्लोकके हृदयको; जल-बिन्दु भी तो
मोती समान नलिनी-दलपै सुहाते ।८

दुर्दोष दूर तव हो स्तुतिका बनाना,
तेरी कथा तक हरे जगके अघों को;
हो दूर सूर्य, करती उस की प्रभा ही
अच्छे प्रफुल्लित सरोजन को सरों में ।९

आश्चर्य क्या, भुवनरत्न, भले गुणों से
तेरी किये स्तुति बने तुझ से मनुष्य !
क्या काम है जगत में उन मालिकों का
जो आत्म-तुल्य न करें निज-आश्रितोंको?

अत्यन्त सुन्दर, विभो, तुझ को विलोक,
अन्यत्र आंख लगती नहिं मानवोंकी ।
क्षीराब्धि का मधुर सुन्दर वारि पीके,
पीना चहे जलधिका जल कौन खारा? ११

जो शान्ति के सुपरमाणु, प्रभो, तनू में
तेरे लगे, जगत में उतने वही थे;
सौन्दर्य—सार जगदीश्वर, चित्त हर्ता,
तेरे समान इससे नहिं रूप कोई ।१२
तेरा कहां मुख सुरादिक नेत्र—रम्य,
सर्वोपमान विजयी, जगदीश, नाथ !
त्यों ही कलंकित कहां वह चन्द्रबिम्ब,
जो हो पड़े दिवसमें द्युतिहीन फीका।१३
अत्यन्त सुन्दर कलानिधि की कला से
तेरे मनोज्ञ गुण, नाथ, फिरें जगों में
है आसरा त्रिजगदीश्वर का जिन्हों को,
रोके उन्हें त्रिजगमें फिरते न कोई।१२
देवाङ्गना हर सकीं मन को न तेरे,
आश्चर्य नाथ, इस में कुछ भी नहीं है !
कल्पांत के पवन से उड़ते पहाड़,
पै मन्दराद्रि हिलता तक है कभी क्या?

बत्ती नहीं, नहिं धुआं, नहिं तैल पूर,
भारी हवा तक नहीं सकती बुझा है;
सारे त्रिलोक बिच है करता उजेला,
उत्कृष्ट दीपक विभो, द्युतिकारि तू है।१६

तू हो न अस्त, तुझको गहता न राहु,
पाते प्रकाश तुझसे जग एक साथ;
तेरा प्रभाव रुकता नहिं बादलों से,
तू सूर्य से अधिक है महिमा-निधान!१७

मोहांधकार हरता, रहता उगा ही,
जाता न राहु--मुखमें, न छुपे घनोंसे;
अच्छे प्रकाशित करे जगको, सुहावे,
अत्यन्त कान्तिधर, नाथ, मुखेन्दु तेरा।

क्या भानु से दिवसमें, निशिमें शशीसे,
तेरे, प्रभो, सुमुख-से तम नाश होवे?
अच्छी तरह पक गया जग बीच धान,
है काम क्या जल-भरे इन बादलों से!१९

जो ज्ञान निर्मल, विभो, तुझमें सुहाता,
भाता नहीं वह कभी पर-देवता में;
होती मनोहर छटा मणि-मध्य जो है,
सो काचमें नहिं; पड़े रवि-विम्बके भी।२०
देखे भले, अयि विभो, पर-देवता ही,
देखे जिन्हें हृदय आ तुझ में रमे ये;
तेरे विलोकन किये फल क्या प्रभो, जो
कोई रमे न मनमें पर-जन्म में भी ?२१
माएं अनेक जनतीं जग में सुतों को,
हैं किन्तु वे न तुझ-से सुतकी प्रसूता;
सारी दिशा धर रहीं रवि का उजेला,
पै एक पूरब-दिशा रविको उगाती।२२
योगी तुझे परम-पूरुष हैं बताते,
आदित्य-वर्ण मलहीन तमिस्र-हारी;
पाके तुझे, जय करें सब मौत को भी,
है और ईश्वर नहीं पर मोक्ष-मार्ग।२३

योगीश, अव्यय, अचिंत्य, अनङ्गकेतु,
ब्रह्मा, असंख्य परमेश्वर, एक, नाना,
ज्ञान-स्वरूप, विभु निर्मल, योगवेत्ता;
त्यों आद्य, सन्त तुझको कहते अनन्त ।२४
तू बुद्ध है विबुध-पूजित-बुद्धि वाला,
कल्याण, कर्तृवर शङ्कर भी तुही है;
तू मोक्ष--मार्ग--विधि--कारक है विधाता,
है व्यक्त, नाथ, पुरुषोत्तम भी तुही है।२५
त्रैलोक्य-आर्ति-हर नाथ, तुझे नमूं मैं,
हे भूमिके विमल रत्न, तुझे नमूं मैं:
हे ईश सर्व जगके, तुझको नमूं मैं,
मेरे भवोदधि-विनाशि, तुझे नमूं मैं।२६
आश्चर्य क्या गुण सभी तुझमें समाये,
अन्यत्र क्योंकि न मिली उनको जगा ही
देखा न, नाथ, मुख भी तव स्वप्नमें भी,
पा आसरा जगतका सब दोष ने तो।२७

नीचे अशोक तरुके तन है सुहाता
तेरा विभो, विमल रूप प्रकाश-कर्त्ता
फैली हुई किरणका, तमका विनाशी,
मानो समीप घनके रवि-बिम्ब ही है !२८
सिंहासन-स्फटिक रत्न-जड़ा उसी में
भाता, विभो, कनक-कान्त शरीर तेरा;
ज्यों रत्न-पूर्ण उदयाचल शीशपै जा
फैला स्वकीय किरणों रवि-बिम्ब सोहे ।२९
तेरा सुवर्ण-सम देह, विभो, सुहाता
है, श्वेत कुन्द-सम चामर के उड़े से
सोहे सुमेरुगिरि, कांचन कान्तिधारी,
ज्यों चन्द्रकांति-धर निर्झरके बहे से ।३०
मोती मनोहर लगे जिनमें, सुहाते
नीके हिमांशु-सम सूरज-ताप-हारी;
हैं तीन छत्र शिरपै अतिरम्य तेरे,
जो तीन लोक परमेश्वरता बताते ।३१

गम्भीर नाद भरता दश ही दिशा में,
सत्संग की त्रिजग को महिमा बताता
धर्मेशकी कर रहा जय-घोषणा है
आकाश बीच बजता यशका नगारा ।३२

गन्धोद-बिन्दु-युत मारुतकी गिराई
मन्दारकादि तरुकी कुसुमावलीकी
होती मनोरम महा सुरलोक से है
वर्षा मनो तव लसे वचनावली है ।३३

त्रैलोक्यकी सब प्रभामय वस्तु जीती;
भामण्डल प्रबल है तव, नाथ ऐसा !
नाना प्रचण्ड रवि-तुल्य सुदीप्ति-धारी
है जीतता शशि सुशोभित रात को भी

है स्वर्ग-मोक्ष-पथ-दर्शनका सुनेता सद्धर्म
के कथन में पटु है जगों के ।
दिव्यध्वनि प्रकट अर्थमयी; प्रभो है
तेरी, लहै सकल मानव बोध जिससे ।३५

फूले हुए कनक के नव पद्म के-से,
शोभायमान नखकी किरण-प्रभा से;
तूने जहां पग धरे अपने, विभो, हैं,
नीके वहां विबुध पङ्कज कल्पते हैं। ३६
तेरी विभूति इस भांति, विभो, हुई जो,
सो धर्म के कथन में न हुई किसी की;
होते प्रकाशित, परन्तु तमिस्र-हर्ता
होता न तेज रवि-तुल्य कहीं ग्रहोंका। ३७
दोनों कपोल झरते मदसे सने हैं,
गुंजार खूब करती मधुपावली है;
ऐसा प्रमत्त गज होकर क्रुद्ध आवे,
पावें न किन्तु भय, आश्रित लोक तेरे ३८
नाना करीन्द्रदल-कुम्भ विदारके, की
पृथ्वी सुरम्य जिस ने गज-मोतियों से,
ऐसा मृगेन्द्र तक चोट करे न उसपे
तेरे पदाद्रि जिसका शुभ आसरा है। ३९

झालें उठें, चहुं उड़ें जलते अङ्गारे,
दावाग्नि जो प्रलय-वह्नि समान भासे,
संसार भस्म करने-हित पास आवे
त्वत्कीर्ति-गान शुभ-वारि उसे शमावे ।४०

रक्ताक्ष क्रुद्ध पिक-कंठ समान काला,
फुङ्कार सर्प फणको कर उच्च धावे,
निःशंक हो जन उसे पगसे उलांघे,
त्वन्नाम नाग-दमनी जिसके हिये हो ।४१

घोड़े जहां हिनहिने, गरजे गजाली,
ऐसे महाप्रबल सैन्य धराधिपों के,
जाते सभी बिखर हैं तव नाम गाये,
ज्यों अन्धकार उगते रवि के करोंसे ।४२

बर्छे लगे बह रहे गज-रक्तके हैं
तालाब से, विकल हैं तरणार्थ योद्धा,
जीते न जायँ रिपु, संगर बीच ऐसे
तेरे प्रभो, चरण सेवक जीतते हैं ।४३

हैं काल-नृत्य करते मकरादि जन्तु,
त्यों वाड़वाग्नि अति भीषण सिन्धु में है,
तूफ़ान में पड़ गये जिनके जहाज़,
वे भी, प्रभो, स्मरणसे तव, पार होते ।४४

अत्यन्त पीड़ित जलोदर-भारसे हैं,
है दुर्दशा, तज चुके निज-जीविताशा;
वे भी लगा तव पदाब्ज-रजःसुधाको
होते, प्रभो, मदन-तुल्य सुरूप-देही ।४५

सारा शरीर जकड़ा दृढ़ सांकलों से,
बेड़ी पड़ें, छिल गईं जिनकी सुजांघें,
त्वन्नाम-मन्त्र जपते-जपते उन्होंके
जल्दी स्वयं झर पड़े सब बन्ध बेड़ी ।४६

जो बुद्धिमान इस सुस्तवको पढ़ें हैं,
होके विभीत उनसे भय भाग जाता
दावाग्नि-सिन्धु-अहिका, रण-रोगका, त्यों
पंचास्य, मत्त गजका, सब बन्धनोंका ।४७

तेरे मनोज्ञ गुणसे स्तव-मालिका ये
गूंथी, प्रभो, विविध वर्ण सुपुष्पवाली
मैंने सभक्ति, जनकंठ धरे इसे जो;
सो 'मानतुङ्ग' सम प्राप्त करे सुलक्ष्मी।४८

नित्य आयु तेरी झरै, धन गैरे मिल खायें,
तू तो रोता ही रहा, हाथ झुलाता जाय।
अरे जीव भव—वनविषैं, तेरा कौन सहाय,
काल—सिंह पकरै तुझे, तब को लेत बचाय॥

—'बुधजन'

